अग्रवालों की उत्पत्ति

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र

स्वच्छ हिन्दी पाठ — प्रारम्भिक मसौदा v0.1

संपादकीय टिप्पणी: यह पाठ उपलब्ध स्कैन और OCR के आधार पर तैयार किया गया प्रारम्भिक स्वच्छ हिन्दी मसौदा है। उद्देश्य पहले एक पढ़ने योग्य हिन्दी आधार-पाठ तैयार करना है। कुछ पुराने शब्दों, स्थानों, गोत्र-नामों और धुंधले OCR अंशों की आगे मूल पृष्ठों से फिर जाँच करनी होगी। जहाँ पाठ निश्चित नहीं है, वहाँ `[अस्पष्ट]` या टिप्पणी दी गयी है। वंश, पुराण, और परंपरा से जुड़े कथन यहाँ मूल ग्रंथ/समुदाय-परंपरा के रूप में रखे गए हैं।

श्रीः

अग्रवालों की उत्पत्ति

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र विरचित

काशीनिवासी बाबू राधाकृष्णदास की सम्मति सहित।

संस्करण: दिसम्बर 2004, संवत् 2061

मुद्रक एवं प्रकाशक: खेमराज श्रीकृष्णदास, अध्यक्ष, श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई — 400004।

समर्पण

प्रिय अग्र भाइयो!

मैं अनेकशः धन्यवाद बाबू राधाकृष्णजी, काशी-निवासी, को देता हूँ कि जिन्होंने मेरी अभिलाषा पूर्ण करने के लिये यह पुस्तक मुद्रणार्थ कृपा की। अब हे बन्धुगण! यह स्ववंशहितकारिणी पुस्तक आप सबके समक्ष अमूल्य रूप में उपस्थित की जाती है। कृपा कर स्वीकार कीजिये, और जहाँ कहीं कोई त्रुटि दृष्टिगत हो तो तत्काल सूचित कीजिये, जिससे पुनरावृत्ति में यह पुस्तक उन दोषों से वर्जित कर दी जाए।

निवेदन

यह “उत्पत्ति” पूज्यपाद भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने संवत् 1928 में बनाई थी। तब से इसके कई संस्करण छपकर इस प्रांत में प्रसिद्ध हो चुके। परन्तु देश में इसका प्रचार कम देखकर इस अभाव को दूर करने की इच्छा वैद्यरत्नभूषण गंगाविष्णु श्रीकृष्णदासजी ने मुझसे प्रकट की। मैंने सहर्ष और धन्यवादपूर्वक इस ग्रंथ को छापने का अधिकार अपने मित्र बाबू रामदीनसिंह की अनुमति से इनको दिया। आशा है कि इसके प्रचार से हमारे भाई लोग अपने पूर्वपुरुषों का इतिहास जानकर अपने कुल-धर्म और मर्यादा के पालन में तत्पर होंगे।

काशी, आषाढ़ कृष्ण 9, संवत् 1950

निवेदक — राधाकृष्णदास

भूमिका

यह "वंशावली" परंपरा की जनश्रुति और प्राचीन लेखों से संगृहीत हुई है; परन्तु इसका विशेष भाग भविष्यपुराण के उत्तर भाग की श्रीमहालक्ष्मी कथा से लिया गया है। इससे वैश्यो में मुख्य अग्रवालों की उत्पत्ति लिखी है। इस बात का महाराजा जयसिंह के समय में निर्णय हुआ था कि वैश्यों में मुख्य अग्रवाल ही हैं। इन अग्रवालों का संक्षेप वृत्तान्त इस स्थान पर लिखा जाता है।

इनका मुख्य देश पश्चिमोत्तर प्रांत है और इनकी बोली भी प्रायः सबकी खड़ी बोली, अर्थात् उर्दू/हिन्दुस्तानी, है। इनके पुरोहित गौड़ ब्राह्मण हैं। इनका व्यवहार सीधा और प्रायः सच्चा होता है। इस जाति में एक विशेषता यह है कि इनमें कोई ऊँचा-नीचा नहीं होता और न किसी की कोई अलग उपाधि होती है। बनारस और मिर्जापुर में तो पुरबियों का नाम भी सुना जाता है। जो देश में पूछे कि तुम पुरबिये हो कि पछाहें, तो ये लोग बड़ा आश्चर्य करते हैं और कहते हैं कि पुरबिये शब्द का क्या अर्थ है।

बनारस के पछाहें लोगों में भी ठीक अग्रवालों की रीतियाँ नहीं मिलतीं और उनकी बोली भी वैसी नहीं है। केवल जो घर दिल्लीवाले लोगों के हैं, उनमें वे बातें हैं। इन लोगों में जैसे विवाह आदि में उत्सव होता है, वैसे ही मरने में बरसों तक भी करते हैं। परन्तु जब बड़ा मृत्युभोज होता है, तब विवाह से भी अधिक धूमधाम विशेष कर देते हैं।

देश में तो जामा-पगड़ी पहनकर सब दाल-भात खाते हैं, पर इधर यह व्यवहार नहीं करते और केवल पूरी खाने में जाति का साथ देते हैं। एक बात यह भी इस जाति में उत्तम है कि अग्रवालों में अंस और मदिरा की चाल कहीं नहीं है; पर हुक्का इनके पुरोहित आचार्य दोनों पीते हैं। जो लोग नेमी हों, वे न पियें, पर जाति की चाल है। विवाह के समय इनका बहुत व्यय करना सबमें प्रसिद्ध है और इसी विपत्ति से कई घर बिगड़ गये, पर यह रीति छोड़ते नहीं।

इनमें कुछ लोग जैन भी होते हैं और देश में सब जनेऊ पहनते हैं; पर इधर पूरब में कोई-कोई नहीं भी पहनते। इनके पुरुषों का पहिरावा पगड़ी, पायजामा या धोती और अंगा है। स्त्रियों का पहिरावा ओढ़ना, घाघरा या छोटी उम्र में सुथना है। दसों संस्कार होने की चाल इनमें अब तक मिलती है। पुरबियों के अतिरिक्त मारवाड़ी अग्रवाल भी होते हैं, पर इनका ठीक पता नहीं मिलता कि कब से और कहाँ से हैं। जैसे पछाहें अग्रवालों की चाल खत्रियों से मिलती है, वैसे ही इन मारवाड़ियों की माहेश्वरियों से मिलती है; पर पुरबियों की चाल तो इन दोनों से विलक्षण है।

अग्रवालों की उत्पत्ति की भूमिका में यह बात लिखनी भी आनंद देनेवाली होगी कि श्रीनन्द राय जी, जिनके घर साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र प्रकट हुए, वैश्य ही थे; और यह बात श्रीमद्भागवत आदि ग्रंथों से भी निश्चय की गई है। जो हो, इस समय वैश्यदासे लोग बड़े धनवान और उदार होते आये; पर इन दिनों वे बातें जाती रही थीं। मुगलों के समय से इनकी बुद्धि फिर हुई और अब तक होती जाती है।

मैंने इस छोटे ग्रंथ में संक्षेप से इनकी उत्पत्ति लिखी है। निश्चय है कि इसे पढ़कर वे लोग अपनी कुल-परंपरा जानेंगे और मुझे भी अपने दीन और छोटे भाइयों में स्मरण रखेंगे।

वैशाख शुद्ध 9, संवत् 1928

काशी

श्रीहरिश्चन्द्र

अग्रवालों की उत्पत्ति

श्रीः वैश्यवंशावतंसाय भगवते श्रीकृष्णचन्द्राय नमः।

दोहा

विप्र, वैश्यावरी, दुष्ट-दमन हित बन्द।

जय-जय गोकुल गोप गो, गोपीपति नन्दनन्द॥1॥

भगवान ने मुख से ब्राह्मण, बाहु से क्षत्रिय, जंघा से वैश्य और चरणों से शूद्र को बनाया। उसी वैश्य को चार कर्मों का अधिकार दिया — पहला खेती, दूसरा गौ की रक्षा, तीसरा व्यापार और चौथा व्याज। जैसे वेद और यज्ञादि का स्वामी ब्राह्मण और राज्य तथा युद्ध का स्वामी क्षत्रिय है, वैसे ही धन का स्वामी वैश्य है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य — इन तीनों की द्विज संज्ञा है और तीनों वर्ण वेद-कर्म के अधिकारी हैं।

पहला पुरुष जो वैश्यों में हुआ, उसका नाम धनपाल था। ब्राह्मणों ने उसे प्रतापनगर में राज्य पर बैठाकर धन का अधिकारी बनाया। उसके यहाँ आठ पुत्र और एक कन्या हुई। उस कन्या का नाम सुकुटा था और वह याज्ञवल्क्य ऋषि से ब्याही गई। उन आठ पुत्रों के नाम ये थे — शिव, नल, अनिल, नन्द, कुन्द, बृहद और शेखर [एक नाम अस्पष्ट]। इन पुत्रों के अश्वविद्या शालिहोत्र के आचार्य विशाल राजा ने अपनी आठ बेटियाँ ब्याह दी थीं। उन कन्याओं के नाम थे — पद्मावती, मालती, कान्ति, शुभा, भव्य, भव्या, सर्जा और सुन्दरी। इनका विवाह नाम के क्रम से हुआ।

इन आठ पुत्रों में बल नामक पुत्र योगी और दिगम्बर होकर वन में चला गया। सात पुत्रों ने सात द्वीपों का अधिकार पाया और पृथ्वी में इनका वंश फैल गया। जम्बूद्वीप में विजय नाम का राजा हुआ, जो उन आठ पुत्रों में शिव के कुल में था। उसके वंश में एक सुदर्शन राजा हुआ, जिसकी दो स्त्रियाँ थीं — सेवती और नालिनी। उसका पुत्र धुरन्धर हुआ। इसी धुरन्धर का पड़पोता समाधि नामक वैश्य हुआ। इसी समाधि के वंश में मोहनदास बड़ा प्रसिद्ध हुआ, जिसने कावेरी के तट पर श्रीरंगनाथ जी के बहुत से मंदिर बनाये। इसका पड़पोता नेमिनाथ हुआ, जिसने तैषाल [अस्पष्ट] बसाया और उसका पुत्र वृन्द हुआ, जिसने श्रीवृन्दावन में यज्ञ करके वृन्दा देवी की मूर्ति स्थापित की।

इस वंश में शेर नाम का राजा बहुत प्रसिद्ध हुआ, जिसके नाम से देश बसा है। इसी वंश में हीर नामक राजा हुआ, जिसके रंग आदि सौ पुत्र थे। उनमें रंग ने राज्य पाया और सब बुरे कर्मों से शूद्र हो गये। तब एक समय से इन लोगों ने ढक चलाये — जिन वैश्यों के लोग वैश्य हुए, पर उनके कर्म शूद्रों जैसे थे। रंग का पुत्र विशोक हुआ, उसके पुत्र का नाम बंधु और उसका पुत्र महीधर हुआ। महीधर ने श्रीमहादेव जी को प्रसन्न करके बहुत से वर पाये। इसके वंश में सब लोग व्यवहार-चतुर और धन-पुत्र से सुखी हुए।

इसी वंश में बहुल नाम का एक राजा हुआ। उसके घर बड़े प्रतापी अग्र राजा उत्पन्न हुए। इसको अग्रनाथ और अग्रसेन भी कहते थे। यह बड़ा प्रतापी था। इसने दक्षिण देश के प्रतापनगर को अपनी राजधानी बनाया। यह नगर धन, रत्न और गण से पूर्ण था। यह ऐसा प्रतापी था कि इन्द्र ने भी उससे ईर्ष्या की थी।

एक समय नागलोक से नागों का कुमुद नामक राजा अपनी माधवी कन्या को लेकर भूलोक में आया। उस कन्या को देखकर इन्द्र मोहित हो गया और नागराज से वह कन्या माँगी। पर नागराज ने इन्द्र को वह कन्या नहीं दी और उसका विवाह राजा अग्रसेन से कर दिया। यही माधवी कन्या सब अग्रवालों की जननी है; और इसी नाते हम लोग सर्पों को अब तक मामा कहते हैं।

इन्द्र ने इस बात से बड़ा क्रोध किया और राजा अग्र से वैर मानकर कई वर्ष उनकी राजधानी पर जल नहीं बरसाया। राजा अग्रसेन से बड़ा युद्ध किया। तब भगवान ब्रह्मदेव ने दोनों को युद्ध से रोका। इससे राजा अपनी राजधानी फिर आया और राज्य अपनी स्त्री को सौंपकर आप तीर्थों में पूजने/फिरने चला गया। सब तीर्थों में फिरकर महालक्ष्मी जी की उपासना की। काशी में आकर कपिलधारा तीर्थ पर महादेव जी का बड़ा यज्ञ करके बहुत दान किया। तब श्रीमहादेव जी प्रसन्न होकर प्रकट हुए और कहा — "वर माँगो।" राजा ने कहा — "मैं केवल यही वर माँगता हूँ कि इन्द्र मेरे वश में हो।" इस पर प्रसन्न होकर महादेव ने अनेक वर दिये और कहा कि तुम महालक्ष्मी की उपासना करो, तुम्हारी सब इच्छा पूर्ण होगी।

यह सुनकर राजा फिर तीर्थ में चला और एक ब्राह्मण की सहायता से हरिद्वार पहुँचा। वहाँ से गंगामुख के संग सब तीर्थों में फिरा। जब फिर हरिद्वार आया, तब वहाँ महालक्ष्मी की बड़ी उपासना की। देवी ने प्रसन्न होकर वर दिया कि इन्द्र तेरे वश में होगा और तेरे वंशधर दुःखी कोई न होगा। अंत में कुल के दोनों स्त्री-पुरुष ध्रुवतारा के आसपास रहेंगे। और इस समय तुम कोल्हापुर में जाओ; वहाँ महालक्ष्मी के अवतार राजा महीधर की कन्याओं का स्वयंवर है। वहाँ उन कन्याओं से विवाह करके अपना वंश चलाओ।

देवी से यह वर पाकर राजा कोल्हापुर में गया और वहाँ उन कन्याओं से धूमधाम से विवाह किया। फिर इन्द्र की राजधानी के पास के देश में आया और पंजाब के सिरे से आगरे तक अपना राज्य स्थापित किया और इन्हीं देशों में अपना वंश फैलाया। जब इन्द्र ने राजा के वर का समाचार सुना, तब घबड़ाया और उससे मित्रता करनी चाही। इस हेतु नारद जी को भेजा और एक अप्सरा, जिसका नाम मधुशालिनी था, देकर मेल कर लिया।

इसके पीछे राजा अग्रसेन ने यमुना जी के तट पर श्रीमहालक्ष्मी का बड़ा तप किया। श्रीलक्ष्मी जी ने प्रसन्न होकर ये वर दिये कि आज से यह व्रत तेरे नाम से होगा और तेरे कुल की मैं रक्षा करनेवाली और कुलदेवी हूँगी। इसलिये मेरा दीवाली का उत्सव सब लोग मानेंगे। यह वर देकर श्रीमहालक्ष्मी चली गईं।

तब राजा ने आकर अपना राज्य बसाया। उस राज्य की उत्तर सीमा हिमालय पर्वत और पंजाब की नदियाँ थीं। पूर्व और दक्षिण की सीमा श्रीगंगा जी और पश्चिम की सीमा यमुना जी से लेकर मारवाड़ देश के पास के देश थे। इनके वंश के लोग सर्वदा इन्हीं देशों में बसे। इससे मुख्य अग्रवाल लोग वही हैं जो पंजाब प्रान्त से इधर मेरठ-आगरे तक बसने वाले हैं।

अग्रवालों के मुख्य बसने के नगर ये हैं —

1. आगर, जिसका शुद्ध नाम अग्रपुर है। यह नगर राजा अग्र के पूर्व दक्षिण प्रदेश की राजधानी था।
2. दिल्ली, जिसका शुद्ध नाम इन्द्रप्रस्थ है।
3. गुड़गाँव, जिसका शुद्ध नाम गौड़ग्राम है। यह नगर अग्रवालों के पुरोहित गौड़ ब्राह्मणों को मिला था, इसी से प्रायः अग्रवाल लोग यहीं के माता को पूजते हैं।
4. मेरठ, जिसका शुद्ध नाम महाराष्ट्र है।
5. रोहतक, जिसका शुद्ध नाम रोहिताश्व है।
6. हिसार, जिसका शुद्ध नाम हिसारि देश है।
7. पानीपत, जिसका शुद्ध नाम पुण्यपत्तन जाना जाता है।
8. करनाल।
9. कोटकांगड़ा, जिसका शुद्ध नाम नगरकोट है। अग्रवालों की देवी महामाया का मंदिर यहीं है और ज्वालाजी का मंदिर भी इसी नगर की सीमा पर है।
10. लाहौर, इस नगर का शुद्ध नाम लवकोट है।
11. मंडी, इसी नगर की सीमा में रेवालसर तीर्थ है।
12. बिलासपुर, इसी नगर की सीमा में नयना देवी का मंदिर बसा है।

13. गढ़वाल।
14. जींद-सफीदों।
15. नाभा।
16. नारनौल, इसका शुद्ध नाम नाशिनिवल है।

ये सब नगर उस राजधानी में थे और राजधानी का नाम अग्रनगर था जिसे अब अग्रोहा कहते हैं। आगरा और अग्रोहा — ये दोनों नगर राजा अग्रसेन के नाम से आज तक प्रसिद्ध हैं। राजा अग्रसेन ने अपनी राजधानी में महालक्ष्मी का एक बड़ा मंदिर किया था।

राजा अग्रसेन ने साढ़े सत्रह यज्ञ किये। इसका कारण यह है कि जब राजा ने अठारहवाँ यज्ञ आरम्भ किया और आधा हो भी चुका, तब राजा को यज्ञोपयोगी हिंसा से बड़ी ग्लानि हुई और कहा — "हमारे कुल में यद्यपि कहीं भी कोई मांस नहीं खाता, परन्तु दैवी हिंसा होती है। सो आज से जो मेरे वंश के हों, उनको यह मेरी आज्ञा है कि दैवी हिंसा भी न करे, अर्थात् पशुयज्ञ और बलिदान भी मेरे वंश में न हो।" इसलिये राजा ने उस यज्ञ को भी पूरा नहीं किया।

राजा की सत्रह रानियाँ और एक उपरानी थीं। उनसे एक-एक को तीन-तीन पुत्र और एक-एक कन्या हुई। और उसी साढ़े सत्रह यज्ञ से साढ़े सत्रह गोत्र हुए। लोग देखा भी कहते हैं कि किसी मनुष्य का विवाह जब गोत्र में हो गया तो बड़े लोगों ने एक ही गोत्र के दो भाग कर दिये; इससे साढ़े सत्रह गोत्र हुए। पर यह बात प्रमाण के योग्य नहीं है। राजा अग्र के उन बहत्तर पुत्र और कन्याओं के बेटे अग्रवाल कहाये। "अग्रवाल" का अर्थ अग्र के बालक हैं।

अग्रवालों के साढ़े सत्रह गोत्रों के ये नाम हैं —

1. गर्ग
2. गोयल
3. गोयाल/गावाल
4. बंसल/बात्सिल
5. कासिल/कंसल
6. सिंघल
7. मंगल
8. जिंदल/दक
9. तिंगल
10. ऐरण/रेरण
11. टेरण/तेरण
12. दिगल
13. तितल/तिचल
14. मित्तल
15. तुन्दल
16. तायल
17. गोभिल
18. गौन/गवन, अर्थात् गौड़इन — आधा गोत्र।

अब नामों के कुछ अक्षर उलट-पलट भी हो गये हैं। राजा अग्र ने अपने सहायक गर्ग ऋषि के नाम से अपना अथवा प्रथम गोत्र किया और दूसरे गोत्रों के नाम भी यज्ञों के अनुसार रखे। राजा अग्र ने अपने कुलपुरोहित गौड़ ब्राह्मण बनाये। उस काल में सब अग्रवाल वेद पढ़नेवाले और त्रिकाल साधनेवाले थे।

राजा अग्र वृद्ध होकर तप करने चला गया और उसका पुत्र विभु राज्य पर बैठा। उसके कई वंश तक राजा लोग अपने धर्म में निष्ठ होकर राज्य करते रहे। इस वंश में दिवाकर एक राजा हुआ जो वेदधर्म छोड़कर जैन हो गया और उसने बहुत से लोगों को जैन किया। उसी काल से अग्रवालों में वेदधर्म छूटने लगा। परन्तु अग्रोहा और दिल्ली के अग्रवालों ने अपना धर्म नहीं छोड़ा।

इस वंश में राजा उग्रचन्द्र के समय से राज्य घटने लगा। जब शहाबुद्दीन ने चढ़ाई की, तब तो अग्रोहा का सब भांति नाश कर दिया। शहाबुद्दीन की लड़ाई में बहुत से लोग मारे गये और उनकी बहुत सी स्त्रियाँ सती हुईं, जो हम लोगों के घरों में अब तक मानी और पूजी जाती हैं। यह अग्रवालों के नाश का ठीक समय था। इसी समय से इनमें से बहुतों ने धर्म छोड़ दिये और यज्ञोपवीत तोड़ डाले। उस समय जो अग्रवाले भागे वे मारवाड़ और पूर्व में जा बसे। तब उनके वंश पुरबिये और मारवाड़ी अग्रवाले हुए। उत्तराधी और दक्षिणाधी लोग भी इसी भांति हुए। पर मुख्य अग्रवाले वही कहलाये जो दिल्ली प्रांत में बच गये थे।

जब मुगलों का राज्य हुआ तब अग्रवालों की फिर बढ़ती हुई। अकबर ने तो अग्रवालों को अपना वजीर बनाया। इसी काल से अग्रवालों की विशेष वृद्धि हुई। अकबर के दो सूर्य और प्रसिद्ध अग्रवाले वजीर थे, जिनका नाम महाराज टोडरमल और मधुशाह था। मधुशाही पैसा इन्हीं के नाम से चला है।

इति अग्रवालों की उत्पत्ति संपूर्ण।

संपादकीय टीका

मूल पुस्तक के अंतिम भाग में यह टिप्पणी मिलती है कि महाराज टोडरमल खत्री थे — यह बात पूज्य भारतेन्दुजी को शिवपुर द्रौपदी कुण्ड के लेख देखने से पीछे से ज्ञात हुई। यह लेख “हरिश्चन्द्रकला” में छपा है।

राधाकृष्णदास

26।3।15

आगे की जाँच के लिए सूची

1. भूमिका के कुछ अंशों में “पुरबिये/पछाहे” और व्यवहार संबंधी शब्दों की मूल पृष्ठ से पुनः जाँच।

2. वैश्य-वंशावली के आरम्भिक नाम — आठ पुत्रों और आठ कन्याओं के नामों की पुनः जाँच।

3. “तैषाल” / “शेर” / “शातका देश” जैसे अस्पष्ट स्थान/नामों की मूल पृष्ठ से तुलना।

4. साढ़े सत्रह गोत्रों की सूची को मूल पृष्ठ और प्रचलित अग्रवाल गोत्र-परंपरा से मिलाना।

5. पुराने नगरों के “शुद्ध नाम” — जैसे अग्रपुर, इन्द्रप्रस्थ, गौड़ग्राम, रोहिताश्व, लवकोट आदि — की अलग व्याख्यात्मक टिप्पणी तैयार करना।

6. अग्रोहा, महालक्ष्मी, नागकन्या माधवी, इन्द्र-वैर, यज्ञ और अहिंसा कथा — इन पर अलग “समुदाय परंपरा” टिप्पणी जोड़नी होगी।

7. अंतिम टिप्पणी में टोडरमल संबंधी संशोधन को स्पष्ट रूप से पाठक-टिप्पणी में रखना होगा।